द्वितीय अध्याय

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ : स्वरूप-विवेचन

द्वितीय अध्याय

''ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ : स्वरूप-विवेचन''

प्रास्ताविक -

वर्ण व्यवस्था पर आधारित भारत की समाज व्यवस्था दुनिया की सबसे शर्मनाक समाज व्यवस्था है। इसकी अनुभूति तब होती है जब हम ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ पढ़ते हैं। ये कहानियाँ बताती हैं कि दलितों की जिंदगी जानवरों से भी गई-बीती है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ चीख-चीख कर हमें बता देती हैं कि मनुष्य के साथ जानवरों से भी बदतर ढ़ंग से पेश आनेवाले लोग इन्सान कहलाने योग्य नहीं हैं।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों के संदर्भ में शिवकुमार मिश्र लिखते हैं इनकी - ''कहानियाँ अपने रचनात्मक कौशल, संवेदना और शिल्प, हर आयाम पर दलित कहानियाँ होते हुए भी हिंदी की यथार्थवादी परंपरा की एक मजबूत कड़ी है।''[1] उनकी कहानियाँ अलग-अलग पहलुओं को भी बेबाकी से घटनाओं के माध्यम से प्रस्तुत करती हैं। विवेकी सिंह का कहना है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में ''यथार्थबोध की गहराई तो है ही, उन्हें मानव-मनोविज्ञान की भी अच्छी पकड़ है।''[2] उनकी कहानियों की ख़ास विशेषत: यह है कि उन्होंने सर्वत्र सामाजिक भेदभाव को ही अपना विषय बनाया है। उनकी कहानियाँ समस्या प्रधान भी बन गयी हैं। आजादी के बाद भी भारतीय समाज व्यवस्था में रोजगार की व्यवस्था और वैज्ञानिक शिक्षा का ही नहीं साधारण शिक्षा के भी प्रचार का समुचित उपाय नहीं किया जिससे दलित समस्या के समाधान में सार्थक ढ़ंग से मदद मिलती । शोषण की व्यवस्था के प्रति ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ न्याय मांगने की कोशिश करती हैं। उनकी कहानियाँ विश्वसनीय बनने का प्रमुख कारण तो यह है

---

1 संपा. आग्नेय - 'साक्षात्कार', नवंबर 2001, पृष्ठ 107

2 संपा. नंदकिशोर नवल - विवेकी सिंह, 'कसौटी नौ', पृष्ठ 112

कि वे खुद दलित हैं और प्राय: उनकी सभी कहानियाँ दलित जीवन से संबंधित हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने बहुत सारे प्रसंगों को अपनी अनुभवदग्धता से कहानियों में स्थान दिया है। दलितों की दबी हुई और शोषित स्थिति को बदल देने के लिए प्रत्येक मन तब-तब विश्वदृष्टि की आवश्यकता को बढ़ावा देगा जब-जब वह ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की कहानियाँ पूर्ण आत्मीयता और गहराई के साथ पढ़ेगा। विवेकी सिंह कहते है - "नुक्ताचीनी अपनी जगह पर ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का यह कहानी संग्रह इस बात का सूचक है कि हिंदी साहित्य में एक नए युग का आरंभ हो चुका है जो इसमें गुणात्मक परिवर्तन ला देगा ।"[1]

'वसुधैव कुटुम्बकम' और 'जीवों जीवस्य जीवनं' की मान्यताओं पर आघात करनेवाली तथा सवर्णों की स्थापित मान्यताओं तथा व्यवस्थाओं को यथार्थ रूप से प्रस्तुत करनेवाली ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों का यहाँ स्वरूपगत विवेचन प्रस्तुत करना आवश्यक समझता हूँ।

2.1 भावप्रवण कथाएँ -

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में कुछ भाव तथा मर्मस्पर्शी कथाएँ भी परिलक्षित होती हैं। उनकी कहानियों की घटना में दलित पात्र सुवर्णों की जिन क्रूरताओं से गुजरते हैं वे जितनी भयानक यातना भोगते हैं वे दिल दहला देती हैं। सवर्णों में स्थित मानवीयता में दलितों के लिए कोई स्थान नहीं अर्थात सवर्णों की मानवीयता दलितों को छोड़कर ही चलती रही है।

2.1.1 **'कहाँ जाए सतीश'** नामक कहानी में छोटा-सा सतीश अपने माँ-बाप का घर छोड़कर एक ब्राह्मण के घर में रह रहा है। उसका अपने माता-पिता का घर छोड़ने का कारण सिर्फ यही था कि वह पढ़ना चाहता है और उसके पिताजी उसे सफाई कर्मचारी बनाना चाहते थे। इसलिए छोटी-सी उमर में भी वह बल्ब फैक्टरी में काम कर शिक्षा हासिल

---

1 संपा. नंदकिशोर नवल - विवेकी सिंह, 'कसौटी नौ', पृष्ठ 112

कर रहा था। छोटे से सतीश के अच्छे स्वभाव ने पंत परिवार का मन जीत लिया था। उनकी बेटी ने सतीश को राखी बांधकर भाई-बहन के रिश्ते को और अधिक मजबूत बनाया था। लेकिन सतीश के प्रति पनपा हुआ स्नेह तथा अपनापे की भावना तब चकनाचूर हो जाती है, जब मिसेस पंत को सतीश के भंगी जाति का पत्ता चलता है। सतीश को घर से बाहर निकाल दिया जाता है। उसके कपड़ों को भी बिना छुए एक तार पर से फेंक दिया जाता है। मानो सतीश के कपड़ों में भी जाति के किटाणू छिपे हुए हो । प्रश्न यह उठता है कि क्या सतीश के जीवन में यातनाएँ और दु:ख के आगमन का कारण है सिर्फ उसकी जाति ? कितनी शर्मनाक बात है यह किस लिए है यह जातिवाद, अस्पृश्यता और कैसी है यह समाज की मानसिकता ? इस संदर्भ में बाबुराव बागुल का कथन दृष्टव्य है - "इस सुंदर देश को एक विचित्र रोग है अस्पृश्यता । हिंदू विचारवंत जिनके सामने नतमस्तक होते हैं उन मुनि-महात्माओं ने अस्पृश्यता ऐसी कुशलता से रचि है कि उसकी प्रतिमा से सीर में दर्द होता है। हमारे समाज में जाति व्यवस्था हर एक रूप से हर एक के मन में बसी हुई है। धर्मांतर करके भी वह नहीं जाएगी क्योंकि वह देह में नहीं मन में है।"[1] इसका निर्वहण हमारा कुलीन तथा सवर्ण समाज ही कर रहा हैं। जैसे मिसेस पंत को छोटे से सतीश का खयाल भी नहीं आया और रात को ही उसे घर से निकाल दिया ।

छोटा सा सतीश छह किलोमीटर पैदल चला जाता है, ऐजाज साहब के पास जिसे वह देवता मानता था। इस आशा से कि ऐजाज साहब एक रात रहने के लिए जगह देंगे। लेकिन वे भी मना करते हैं, उनका भी मुखौटा उतर जाता है । छोटा सतीश भावनामय होकर एवं परिस्थिति से भयभीत होकर निकल पड़ता है। सतीश अपने अनिश्चित भविष्य के सवाल को दरपेश करते हुए हम से मुखातिब होता है । यही नहीं, वर्ण व्यवस्था के मालिक बन बैठे समाज को सोचने के लिए विवश करता है।

आशावादी भविष्य के प्रति बढ़ते सतीश के कदम अनिश्चित और निराशावादी अंध:कार के जंगल में विलिन होते हैं । कारण है सिर्फ उसकी जाति । ऐसी

---

1 बाबुराव बागुल - दलित साहित्य एक अभ्यास, पृष्ठ 36

उत्पीड़ित भावनामय स्थिति प्रस्तुत कहानी में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अंकित की है।

2.1.2 **'जिनावर'** कहानी में भी भावपूर्ण तथा मानवीय संवेदना को जागृत करनेवाली स्थिति दृष्टिगोचर होती है।

घर की बहू को घर से निकाल दिया जाता है, क्योंकि इसका ससुर अपने रिश्तों का खून कर के अपनी बहू का, खसम बनना चाहता है। लेकिन बहू उसकी हवस का शिकार नहीं बनी और उसे सदा के लिए घर से निष्कासित किया गया ।

दलित आदमी जगेसर के साथ बहू को मायके भेजा जाता है। बहू की यात्रा मंद गति से हो रही है। उसका पति अपने बाप के खिलाफ कुछ भी सुनने के लिए तैयार न था। उल्टा बहू को ही गालियाँ देता था और सास का तो कहना हैं कि जिंदगी सुख-चैन से काटनी हैं, तो समझौता कर ले । वह ऐसा समझौता करने के लिए कह रही थी, जिससे बहू जिंदगी भर अपने आपको माफ न कर सके । बहू पितृहीन मायके जा रही थी,जहाँ उसके मामा ने बचपन में ही उसे अपनी हवस का शिकार बना लिया था। विचित्र चक्रावात में फँसी बहू जगेसर को वापस जाने को कहती है। उसका कहना हैं - "यह सुनसान जंगल हवेलियों से ज्यादा सुरक्षित है। कम से कम भेड़िए आवेंगे तो रंग-रूप बदल के तो ना आवेंगे।"[1] आदमी के वेश में औरत की देह के भूखों से ज्यादा जानवरों की हवस का शिकार बनना बहू पसंद करती है। बहू की स्थिति से जगेसर के भीतर छिपा अच्छा इन्सान जाग उठता है और चौधरी के प्रति गहरा आक्रोश प्रकट करता है। अपनी बेटी जैसी बहू पर वासनिक इच्छा प्रकट करनेवाले चौधरी के प्रति जगेसर के मन में घृणा पैदा होती है और वह बहू को बियाबान जंगल में निराश्रित छोड़ देने के लिए कतई राजी नहीं होता । आत्मविश्वास और संकल्प-दृढ़ता के साथ बहू को चलने के लिए कहता है। कहानी आगे कुछ कहे बगैर सार्थक संकेत के साथ समाप्त हो जाती है।

2.1.3 **'अम्मा'** कहानी उस अम्मा की है जो जीवन भर अपने आदर्शों के लिए लड़ती है। उम्र के सातवें दशक में भी वह काम करती है। शिवकुमार मिश्र 'अम्मा' के

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('जिनावर' कहानी से) पृष्ठ 101

संदर्भ में कहते हैं - "अम्मा एक ऐसे माँ के चरित्र को उभारती है जो जिंदगी भर सवर्णों के नरक को ढ़ोते हुए भी अपनी संतान को उस नरक की परछाइयों तक से दूर रखती है।"[1] अम्मा के रूप में एक देवी का चित्रण वाल्मीकि जी ने किया है। अम्मा को जब पता चलता है कि उसकी संतान गलत रास्ते पर जा रही है, तो वह उसे डटकर विरोध करती हैं। उसका बेटा नगरपालिका में क्लर्क था। वह कमीशन लेता था यह जानकर अम्मा उसका विरोध करती है। वह दूसरों की परिस्थिति को भी जान लेती है। जो लोग अपना और अपने बच्चों का पेट मारकर उसे देते हैं उनकी दुर्दशा पर विचार करने को उसे मजबूर करती है। जब उसके पोते भी गलत रास्ते पर जाते हैं तब उनकी शादी करके दूसरों की बेटीयों की जिंदगी खराब करना वह नहीं चाहती । इससे अम्मा की बहुत गहराई तक की सोच स्पष्ट होती है। अम्मा जिस आदर्शों का निर्माण करना चाहती थी,उसके खिलाफ जाकर उसके पोते बेइज्जती का काम करते हैं तब अम्मा को बेहद तकलीफ होती है और वह अपने बेटें और पोतों को समझाते हुए रोने लगती है। अम्मा के चरित्र में इतना ही नहीं है, वह नैतिक मूल्यों से दृढ़ता से प्रतिबद्ध है।

निष्कर्षत: स्पष्ट है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की 'कहाँ जाए सतीश', 'जिनावर' और 'अम्मा' जैसी कहानियों में चरित्रों की भावात्मकता स्पष्ट हुई है। सारांशत: ये कथाएँ भावप्रवण दृष्टिगोचर होती हैं।

2.2 संघर्षयुक्त कथाएँ -

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ स्वाभाविक घटना और चरित्रों को लेकर हमारे सामने आती है। लेकिन उनकी कुछ कहानियों में परिस्थितिजन्य स्वाभाविक संघर्ष भी पाठकों का आकर्षण बढ़ाता है।

2.2.1 **'सलाम'** कहानी को लेकर हम यह कह सकते हैं मौजूदा जाति -व्यवस्था के तहत दलितों के प्रति अभिजात वर्ग के अमानवीय नजरिए और हरकतों के प्रति कहानी का नायक हरीश संघर्ष करता है। परंपरा तथा रूढ़ि का विरोध और तिरस्कार भी हरीश

---

1 संपा. आग्नेय - 'साक्षात्कार', नवंबर 2001, पृष्ठ 105

द्वारा व्यक्त हुआ है। हरीश शिक्षित और प्रबुद्ध युवक है,वह अपनी शादी में चली आ रही प्रथा (सलाम) का विरोध करता है। वह ऐसी प्रथा के खिलाफ है जिसके कारण आदमी को अपमान और दयनीयता का सामना करना पड़े । इसलिए सलाम प्रथा का वह विरोध करके जोखिम उठाता है। कहानी में संघर्षमय वातावरण निर्माण हो जाता है। हरीश बड़े बुजुर्गो की नसीहत, आसन्न विपत्ति की संभावनाओं और दुष्परिणामों के बावजूद विवाह के अवसर पर सवर्णों के घर जाकर सलामी देने और बख्शीश पाने की सदियों से चली आ रही प्रथा का विरोध करता है और अंत तक अपने निर्णय पर दृढ़ रहता है। नई और शिक्षित पीढ़ी का यहाँ हरीश प्रतिनिधित्व कर रहा है। दलितों की अस्मिता और स्वाभिमान की रक्षा को अपना कर्तव्य मानकर वह सवर्णों से मुकाबला करता है। हरीश के इस बर्ताव से उसके ससुर को गाँव के बल्लू रांघड़ के अपशब्दों का सामना करना पड़ता है। दलितता से मरा हुआ हरीश का ससुर बल्लु रांघड़ के पैरों में गिड़गिड़ाकर माफी की भिख मांगता है। लेकिन ससुर के समझाने पर भी हरीश का इरादा नहीं बदलता । इस कहानी का अंत भी एक अजिब ढ़ंग से मोड़ लेता है। यह अंत ऐसा है जो दलित के संघर्ष को और भी आतंकित करे। बारात में एक बच्चा रोटी खाने से इन्कार कर देता है, उसे लोग समझाते हैं कि यह रोटी हिंदू ने बनाई है। इसके बावजूद भी मैं नहीं खाऊँगा मुसलमान के हाथों बनी रोटी, बच्चे के शब्द भी दलितों के संदर्भ में अतिक्रमण करते हुए समाज की मानसिकता पर सवाल उठाते हैं। इस कहानी में कमल को ब्राहमण होते हुए भी दलितों की बारात में आने के कारण चाय की दूकान में चाय नहीं मिलती उसे भी संघर्षशील माहौल से गुजरना पड़ता है। सारांशत: यह कहानी पुरानी प्रथा को तोड़ने को लेकर संघर्षमय और संवेदनशील बन गई हैं।

2.2.2 **'सपना'** कहानी शुरू से लेकर अंत तक संघर्ष भरे वातावरण को बनाएँ रखती हैं। शुरू में मंदिर बनाने के विषय को लेकर संघर्ष उभरा है, तो अंत में दलित युवक को पंड़ाल में आगे प्रवेश न देने को लेकर संघर्ष निर्माण हुआ है। सवर्णों में कौन-सा मंदिर हो और कौन सा भगवान सबसे प्रभावित है इसका परिचय देने की कोशिश भी कहानी में

की गई है। अपने-अपने भगवानों को आगे करके सवर्णों की विचार-भिन्नता भी इस कहानी में दृष्टिगोचर हुई है। शिवकुमार मिश्र कहते हैं - ''हिंदू धर्म की बहुदेववादी आस्थाओं की व्यंगात्मक प्रस्तुति के साथ दलितों के प्रति सवर्णों के भेदभाव को भी विशिष्ट संदर्भ में उजागर करती है।''[1] कहानी में बालाजी मंदिर बनाने का प्रस्ताव पारित हो जाने के पश्चात कारखाने का हर एक आदमी इस काम में जुट जाता है। मंदिर निर्माण कार्य का प्रमुख नटराजन कुछ जिम्मेदारी ऋषिराज पर भी सौंपता है। ऋषिराज अपने दलित मित्र अनिल कुमार गौत्तम के सहयोग से मंदिर निर्माण कार्य में मदद करता है। गौत्तम भी अपना खून-पसीना एक करके पूरी लगन के साथ इस कार्य में जुट जाता है। मंदिर कार्य पूरा हो जाने पर मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा के कार्यक्रम में गौत्तम भी अपने परिवार सहित उपस्थित हो जाता है। लेकिन हिंदुत्ववादी और जातीयता की पगड़ी बांधा नटराजन, गौत्तम को पंड़ाल में आगे बैठने नहीं देता और उसे किसी तरह बाहर निकालने की योजना बना देता है। इस संदर्भ में म.वि. लभाने का कथन दृष्टव्य है -''मानव कल्याण का आशावादी वातावरण हिंदू धर्म में तैयार ही नहीं होता ।''[2] परिणाम स्वरूप नटराजन के मन में खोट आती है, और वह ऋषि से कहता है कि गौत्तम एस.सी. है,''पूजा अनुष्ठानों में उन्हें आगे नहीं बैठाया जा सकता।''[3] गौत्तम की जाति को हीन प्रतित कर नटराजन ने ऋषि के मित्रता को ठेंस पहुँचायी थी । इस संदर्भ में डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कहते हैं - कोई भी हो अपना स्वाभिमान, कुलाभिमान, जातिभिमान चाहे तो धर सकता है लेकिन स्वाभिमान का मतलब परापमान नहीं यह बात भूलने नहीं चाहिए। हमारी जाति अलंग है, हर एक समझ सकता है, लेकिन बाकी की जाति से हम श्रेष्ठ है, यह बता के दूसरों के मन को दु:ख नहीं पहुँचाना चाहिए ।''[4]

ऋषिराज और गौत्तम के प्यार में जाति बाधा नहीं बनती और उसका मित्र प्रेम उभरकर आता है। अपने मित्र के प्रति नटराजन की घृणास्पद भावना उसे अस्त-व्यस्त

---

1 सम्पा. आग्नेय -'साक्षात्कार', नंवबर 2001, पृष्ठ 100
2 म.वि.लभाने - हिंदू धर्म आणि अस्पृश्यांचा अभ्युदय, पृष्ठ 33
3 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम, ('सपना' कहानी से), पृष्ठ 29
4 रत्नाकर गणवीर - डॉ. आंबेडकर विचार धन, पृष्ठ 8

कर देती है और वह आक्रोश से समुचे पंड़ाल को गिरा देता है। कहानियों का अंत यहाँ वाल्मीकि जी संघर्ष भरे माहौल में करते हैं। कहानी में सवर्ण होते हुए भी ऋषिराज का आक्रेश सवर्णों के व्यवहार पर आघात करता है। इससे सच्चे मित्रों की सच्ची पहचान पाठकों के मन पर राज करती है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने संघर्षयुक्त कथानकों द्वारा अलग-अलग घटनाएँ सामने प्रस्तुत की हैं। 'सलाम' कहानी में परंपरा को लेकर संघर्ष उत्पन्न हुआ है। 'सपना' कहानी में दलित गौत्तम को पंड़ाल में आगे न बिठाने के विषय के कारण संघर्ष उपजा है। इन संघर्षों के जरिए ओमप्रकाश जी दलित जीवन उनकी स्थिति और अस्मिता से पाठकों को अवगत कराने की कोशिश करते हैं।

2.3 दमन करनेवाली कथाएँ -

ओमप्रकाश जी की कहानियाँ दमन करनेवाली भी हैं। ये ऐसी कहानियाँ है जो बेवजह पात्रों का दमन करनेवाली स्थितियों को प्रस्तुत करती है।

2.3.1 **'गोहत्या'** इस कहानी में निर्दोष सुक्का को बलि का बकरा बनना पड़ता है और अग्निपरीक्षा देकर यातनामय पहाड़ से गुजर कर तड़पना पड़ताहै।

इसमें लेखक ने गाँव के पंच, जिसे हम पंच परमेश्वर कहते हैं उनके द्वारा किए गए दलित उत्पीड़न, अमानवीयता और बर्बरता को उजागर किया है। निहायत गरीब सुक्का को गोहत्या के जुर्म में फँसाया जाता हैं। इसके पीछे कूट नीति थी, प्रतिष्ठित माने जाने वाले मुखिया जी की । कारण सिर्फ यह था सुक्का अपनी नवविवाहिता पत्नी को उनकी सेवा के लिए हवेली में भेजने को तैयार नहीं होता हैं और उन्हें किंचित दृढ़ता के साथ उत्तर देता है। जिससे मुखिया जी का आत्मसम्मान टूट जाता है और परिणाम स्वरूप बेगुना सुक्का को फँसाया जाता है। गाय का मरने का कारण है, वह धोखे से बारूद वाला आटा खाती है। शक के रूप में पाँच लोगों के नाम सामने आते हैं। पंच परमेश्वर निर्णय लेत हैं कि हर एक के नाम की परची एक लोटे में डाली जाएगी और जिसके नाम की परची निकलेगी

वही गोमाता का हत्यारा होगा । लेकिन मुखिया की चाल से सुक्का बच न सका और उसके ही नाम की परची निकल जाती है । "बलेसर, जोखू, रघू और चिमड़ा इल्जाम से बरी हो जाने से खुश जरूर थे । लेकिन सुक्का के फँस जाने से गमगीन भी थे। सुक्का ने किसी का बुरा नहीं किया । फिर भला वह गऊहत्या क्यों करेगा । इस बात को वे अच्छी तरह जानते थे ।"[1] लेकिन पंचायत के खिलाफ जाकर उनका विरोध करने का सामर्थ्य सुक्का में नहीं था। गाँव के लोगों में उत्सुकता बढ़ी कि पंच परमेश्वर गौ हत्यारे को क्या सजा देते है ? भीड़ में सन्नाटा छाया हुआ था। सुक्का पंचों के सामने गिड़गिड़ा रहा था । मैंने गो हत्या नहीं की है मायबाप मैं निर्दोष हूँ । सुक्का की दयनीय स्थिति पर किसी को दया नहीं आयी । गंगाधर पानतावणे कहते हैं - "हिंदू के अनुसार मंत्र से ब्रह्महत्या एवं गो हत्या का पाप नष्ट हो जाता है, मूर्ति में भगवान आते हैं, शत्रु मरते हैं, तो शत्रु या दलितों को शुद्ध करने की ताकत इन मंत्रों में क्यों नहीं है ।"[2] सवाल यह है कि सुक्का को मंत्र से गोहत्या के जुर्म से बरी क्यों नहीं किया । सवर्णो की पंच परमेश्वरों की रचना भी धोखादायक है। "सत्य से अधिक पिटाई बेचारे न्याय की हुई ।"[3] यह प्रभाकर माचवे जी का कथन यहाँ उपयुक्त हो गया है। बेचारे बेकसूर सुक्का को दहकती फाल उठाकर 'गऊमाता' 'गऊमाता' कहते हुए दस कदम चलने की सजा हो जाती है। यह कहानी निर्दोष सुक्का के चींख से समाप्त हो जाती है और सारा गाँव गोहत्या के पाप से मुक्त हो जाता है। यह कहानी परंपरा में वर्ण दंभियों के हिंस्त्र आचरण को बेनकाब करती है। निर्दोष सुक्का का दमन ही कहानी का सार है।

2.3.1 **'कुचक्र'** इस कहानी दफ्तर में प्रमोशन के कारण आर.बी.नामक दलित युवक को सवर्णों की मानसिक यातनाओं का सामना करना पड़ता है। कहानी का सार मानवीय संवेदना को ध्वस्त करनेवाली सरावोर और मर्मस्पर्शी हैं। इस कारण आर.बी. को कुछ हदतक संघर्षों का सामना करना पड़ता हैं।

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('गोहत्या' कहानी से) पृष्ठ 61
2 गंगाधर पानतावने - वादळाचे वंशज, पृष्ठ 4
3 डॉ. बलवंत कोतमिरे - हिंदी साहित्य - सुषमा, पृष्ठ 65

आर. बी. के सेक्शन में ही निशिकांत काम करता था। प्रमोशन सूची में आर.बी. का नाम आने पर निशिकांत का व्यवहार आर. बी. के प्रति घृणास्पद हो जाता है। क्योंकि आर.बी. दलित है और दलित के अधीनस्थ काम करना निशिकांत को पीड़ा दायक था। इसलिए आर.बी. का प्रमोशन रूकवाने के लिए वह तरह-तरह के मार्ग इस्तेमाल करता है। लेकिन कोई फर्क नहीं पड़ता । एक दिन निशिकांत आर.बी. की शिकायत करते वक्त पकड़ा जाता है। निशिकांत ने आर.बी. को देखा नहीं था और निशिकांत की चाल को आर.बी. जान गया । इस विषय को लेकर दोनों में तू-तू , मैं- मैं हो जाती है - ''दफ्तर का समुचा माहौल ही गड़बड़ा गया था। एक अनजान तनाव पसर गया था सबके बीच। आर.बी. से दुआ-सलाम तक बंद कर दी गई थी। इस बदलाव को आर.बी. समझ रहा था।''[1] इसलिए वह परिस्थिति से संघर्ष कर रहा था। यहाँ केशव मेश्राम का कथन दृष्टव्य है - ''स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद भी दलितों को कष्ट एवं यातनाएँ खत्म हुई यह सद्यस्थिति है। दलितों को कोई भी चीज हक्क और न्याय से मिली ही नहीं। हर एक बात के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है।''[2] परिस्थिति ने विपरीत मोड़ लिया था। ऑफिस में सबको गुडमॉर्निंग कहने पर भी आर.बी.को कोई प्रत्युत्तर नहीं मिलता था। स्टोर सेक्शन में पद भार सँभाले सात दिन भी नहीं हुए थे, तो गोदाम में चोरी का मामला सामने आया । आर. बी. की पूछताछ होती है। यहाँ भी आर.बी. ठीक तरह से सामना करता हैं-''जीवन का मार्ग बाधाओं की चटट्रानों से पटा पड़ा है। इन बाधाओं को ही सीढ़ी बनाकर चढ़नेवाला व्यक्ति सफलता के शिखर पर पहुँच जाता है।''[3] इस सत्यकाम विद्यालंकार जी के कथन के अनुसार ही आर.बी. को संघर्ष का सामना करना पड़ रहा था। लेकिन कपटी निशिकांत के सामने आर.बी. का प्रामाणिक संघर्ष टिक न सका और झूठे आरोप में आर.बी. को निशिकांत ने फँसाया और उसका दमन किया है। इस कहानी में शुरू से ही स्थिति दमन

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('कुचक्र' से) पृष्ठ 106

2 केशव मिश्राम - अक्षर भाकिते, पृष्ठ 33

3 बलवंत कोतमिरे - सत्यकाम विद्यालंकार - हिंदी साहित्य-सुषमा, पृष्ठ 49

करने वाली ही दिखाई देती है लेकिन यह कहानी दमन के साथ भावुकता और मर्म स्पर्शिता को भी अपनाती है।

2.3.2 **'खानाबदोश'** कहानी प्रामाणिक पति-पत्नी की है जो अपने सपनों की पूर्ति के लिए एक ईंट भट्टे पर काम कर रहे हैं। उनका सपना है कि खुद का एक घर हो वह भी पक्की ईंटों का जो इनके लिए बहुत बड़ा आव्हान था। यह कहानी उनके जीवन संषर्घ को उसके सारे जोखिमों के साथ अनेक कारणामों की साक्ष देती है - "गरीबी स्वयं बहुत बड़ा अभिशाप और अपमान है। इस पर दलित हो तो और भी मुश्किल है और लोग है कि बात-बात पर इस अपमान का अहसास कराना नहीं भूलते लगातार छेदते हैं कोचते है ।"[1] इस मूलचंद गौत्तम के कथन को लेकर कहानी की दार्शनिकता दमन की ओर मुड़ती है। ईंट मालिक का बेटा सुबेसिंह का व्यवहार ठीक नहीं है। दलित कामगारों की ओर बुरी नजर से देखना और उनकी कमजोरी का फायदा उठाना ही एक मात्र इसका काम है। किसनी नाम की एक ब्याही लड़की को इसने अपने जाल में फँसाया था जिसके कारण किसनी के पति को शराब की आदत लग गई थी। शराब पीकर वह झोपड़ी में पड़ा रहता था।

इस वातावरण ने सभी कामगारों के मन में सुबेसिंह के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न कर दिया था। यह कहानी तब ज्यादा मजबूत हो जाती है जब सुबेसिंह की नजर गरीब बेचारी मानो पर पड़ती हैं। लेकिन सुकिया का अपनी पत्नी पर पूर्ण विश्वास था। रात-दिन काम करके अपने लिए छोटा-सा पक्की ईंटों का घर बनवाना उनका सपना था। लेकिन बेचारे मानो और सुकिया के सपनों को नजर लग जाती है सुबेसिंह की और सारी मेहनत-आशा, अकांक्षा धाराशाही हो जाती है। किसनी को बरबाद होते हुए मानो ने अपनी आँखों से देखा था। इसलिए वह सुबेसिंह के चाल में फँसती नहीं और इसका प्रतिशोध लेने के लिए सुबेसिंह इनके नसीब को लाथ मार देता है जिससे उनका जीवन काँटों के जंजाल में फँसता हैं। रात-दिन काम करके, भट्टे में जलते हुई आग की तरह ये दोनों भी काम में जल रहे थे। अपने सपनों की पूर्ति करने हेतु एक कदम आगे बढ़ाते हुए जो कच्ची ईंटें बनाई थीं

---

1 संपा. शैलेद्र सागर, - 'कथाक्रम', जनवरी-मार्च, त्रैमासिक, 2002, पृष्ठ 38

सुकिया और मानों ने उसे सुबेसिंह ने अप्रत्यक्ष रूप से चकनाचूर कर दिया - ''मानो का हृदय फटा जा रहा था। टूटी-फूटी ईंटों को देखकर वह बौरा गई थी। जैसे किसी ने उसके पक्की ईंटों के मकान को ही धाराशाही कर दिया था।''[1] इस विपरीत परिस्थिति का सामना करने की ताकत उन गरीब पति-पत्नी में नहीं थी। सुबेसिंह ने इनके कोमल संसार में अंधड़ उत्पन्न किया था।''सुकिया भी हो हल्ला सुनकर मोरी का काम छोड़कर आया था। ईंटों की हालत देखकर उसका दिल भी बैठने लगा था। उसकी जैसे हिम्मत टूट गई थी। वह फटी-फटी आँखों से ईंटों को देख रहा था।''[2] मानो की हालत देखकर सुकिया विचलित हो जाता है। असगर ठेकेदार उन्हें साफ-साफ कह देता है टूटी-फटी ईंटों के पैसे नहीं मिलेंगे। ठेकेदार भी सुबेसिंह का ही मोहरा था। परिणाम यह हो जाता है कि उनकी इतने दिनों की मेहनत बेकार हो जाती है।

दोनों निराश होकर काम छोड़ के चले जाते है। एक दिशाहीन सफर पर जहाँ पर सपनों की पूर्ति की किरण नजर आए । यह कहानी अमीर सुबेसिंह द्वारा गरीब पति-पत्नी के हुए दमन को उजागर करती हैं।

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी 'गोहत्या', 'कुचक्र' और 'खानाबदोश' जैसी कहानियों के माध्यम से बेकसूर लोगों का उनकी दयनीय स्थिति का फायदा उठाकर दमन करनेवाली स्थितियों को तथा बेवजह उन पर अत्याचार करना और दलितों द्वारा विवशतावश सहना उपर्युक्त कहानियों द्वारा दृष्टिगोचर किया है।

2.4 यौन संबंध में जाति न माननेवाली कथा -

'ग्रहण' कहानी में चौधरी जी की बहू और दलित युवक रमेसर जातीयता के तमाम बंधन तोड़कर एक मुहूर्त के लिए एक हो जाते हैं। लेकिन यह कहानी पूरी हो जाती है अगली कहानी बिरम की बहू में । 'ग्रहण' कहानी में ओमप्रकाश वाल्मीकि यह दर्शाते

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम, ('खानाबदोश' कहानी से) पृष्ठ 131

2 वही, पृष्ठ 131

हैं कि चंद्र ग्रहण के अवसर पर भंगी समाज को ऊँचे समाज द्वारा दान मिलता है। परंपरागत रूप से दान की यह जो प्रथा चली आ रही है उसे लेखक ने अलग ढ़ंग से यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया हैं।

बिरम की बहू को शादी के दो साल बाद भी बच्चा नहीं हुआ था। बेचारी को बांझपन का दाग लग गया था। इसलिए उसके प्रति घर के लोगों का रवैया भी बदला-बदला सा लगता था। बहू सिर्फ घृणा और तिरस्कार की पात्र बन गयी थी । इस दु:ख से बचने के लिए उसे एक बच्चे की आवश्यकता थी।

ग्रहण के समय भंगी टोली में दान माँगता नौजवान रेमसर से बिरम की बहू प्रभावित होती है, और रात के सन्नाटे में अँधेरे को साक्षी मानकर बहू के हाथों से गलती होती है। इसे रमेसर भी रोक नहीं पाता और वह दोनों एक दूसरे में समा जाते हैं। मनुष्य भावना लोक का प्राणी है उसमें स्थिति के अनुसार भावनाओं का उद्रेक होना स्वाभाविक है। वह प्रसंग इतना विवश करनेवाला था कि शिवकुमार मिश्र लिखते है - ''दोनों नहीं समझ पाते कि उनके जीवन में यह सब कैसे घटित हो गया ।''[1] रमेसर के कारण बहू बांझपन से मुक्त तो हो गई। लेकिन सवर्ण मानसिकता में पलि बहू भविष्य में क्या आपने आपको माफ कर पाएगी ? यहाँ यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण है कि क्या बांझपन से मुक्ति दिलाने वाला रमेसर उसे कभी याद आएगा ? अभी तो बहू अंतर्मन से रमेसर के प्रति कृतज्ञ थी। उन दोनों में जातिवादी भावना टिक न सकी और सवर्ण समाज की महिला और दलित रमेसर शरीर और मन से एक हो गए थे। इस कारण चौधरी का घर खुशियों से भर उठता है।

यहाँ ओमप्रकाश वाल्मीकि का उद्देश्य यही है कि जाति-पाँति के बवंड़र में यौन संबंध आबाद रूप से खड़ा है फिर वह चोरी-छिपे और स्वार्थ वृत्ति के लिए क्यों न हो।

2.5 जाति भय उत्पन्न करनेवाली कथाएँ -

हजारों सालों से दलित समाज वर्ण व्यवस्था के अमानवीय बंधनों में

---

1 संपा. आग्नेय शिवकुमार मिश्र - साक्षात्कार नवम्बर 2001, पृष्ठ 103

जखड़ा हुआ है। परिणामत: उसके मन में हीनता भाव पुख्ता हुआ है। दलित लोगों ने प्राय: अपने अधिकार के प्रति संघर्ष करने की अपेक्षा अपनी मूक भूमिका को अपनाया । इसलिए ये सामंती अर्थ व्यवस्था और ब्राह्मणवादी व्यवस्था में दलित लोग अपने उज्ज्वल जीवन के उष:काल का इंतजार कर रहें हैं। इस इंतजार में इज्जत और मान सम्मान की जिंदगी जीने के लिए दलितों को जाति छिपा के जीना पड़ रहा है। जो पूर्णत: वास्तवता के खिलाफ है। ओमप्रकाश जी के 'अंधड़' कहानी में झूठे मान सम्मान के लिए जिनेवाले मि.लाल की मानसिकता प्रस्तुत हुई है।

2.5.1 **'अंधड़'** कहानी की शुरआत में मि.लाल की पत्नी अपनी चचेरी बहन बीना का खत पड़ रही है। बीना खत में स्पष्ट कर देती है कि लिखने का कोई औचित्य नहीं है, सिर्फ पिताजी गुजर गए हैं इसलिए चिटट्ी लिख रही हूँ । इन बातों से स्पष्ट है कि मि.लाल और उनका परिवार अपने रिश्तेदारों से दूर है। मि.लाल अपने लोगों से एवं रिश्तेदारों से दूर ही रहना पसंद करते हैं। वे वैज्ञानिक की नौकरी पर सेवारत हैं। उनके मन की धारणा है कि जिस दिन लोगों को पता चलेगा कि हम 'शेड्यूल्ड कास्ट' हैं तब यह मान सम्मान घृणा में बदल जाएगा । इसलिए झूठे मान-सम्मान के लिए मि.लाल ने अपनों को तोड़ दिया था। वर्तमान के दुर्बल सत्य से झूठे वैभव को शक्तिशाली बनाने का प्रयास करनेवाले मि.लाल अपनी पत्नी को भी मायके नहीं जाने देते । क्योंकि यह जाएगी तो वे लोग भी यहाँ आएँगे, जो मि. लाल नहीं चाहते थे। हृदय को हीन बनानेवाला बर्ताव उनकी पत्नी को बिल्कुल पसंद न था। अपने स्वाभाविक जीवन को अपाहिज बनानेवाले मि.लाल ने अपने बच्चों को भी जाति से अपरिचित रखा था। कोई रिश्तेदार या पहचान वाला गलती से इनके घर आ भी जाए तो इनका व्यवहार देखकर किसी की दुबारा आने की हिम्मत न होती ।

लेकिन दीपचंद चाचा की मृत्यु से मि.लाल की अवस्था में बदलाव आता है। सविता भी अचानक -''मि. लाल की भावुकता को देखकर वह चौंकी। उसे लगा, कोई अजनबी सामने बैठा है। पति का यह भावुक रूप उसने पहली बार देखा था। वह ताज्जुब से

उसकी ओर देखने लगी ।''[1] मि. लाल के व्यवहार का बदलाव सविता के लिए काल्पनिक सत्य लग रहा था। सविता का ऐसा व्यवहार स्वाभाविक था। क्योंकि दीपचंद चाचा ने मि. लाल को शिक्षा के लिए अपने घर में रखा था। जो नौकरी मिली है वह भी सिर्फ दीपचंद चाचा की बदौलत । उसी दीपचंद चाचा को भी मि. लाल ने अपने मान सम्मान के लिए भूला दिया था।

जाति के कारण अपनों से दूर रहनेवाले मि.लाल आखिर परिस्थिति से समझौता कर देहरादून जाने का फैसला करते हैं। फिर भी उनके मन में जाति भय था। वे अपने बच्चों को अतीत से दूर रखना चाहते थे- ''उन्हें डर था - बच्चे उस माहौल को बर्दाश्त नहीं कर पाएँगे जब उन्हें पता चलेगा कि हमारी जड़े कहाँ हैं, तो उनपर क्या बीतेगी ।''[2] लेकिन पिंकी भी उनके साथ देहरादून जाने की जिद्द करती है। अपनी बेटी पिंकी की जिद्द के कारण वे उसे भी साथ लेके जाते हैं। वहाँ का माहौल, अपरिचित लोग और गंदी जगह देखकर पिंकी का मन उदास हो जाता है। लेकिन पिंकी का उदास मन एक अजीब मोड़ लेता है जब उसको पता चलता है कि यह अपरिचित लोग उसी के मामा, नाना आदि हैं तब वह अपने पापा के झूठे पन को ललकारती है। पिंकी मि. लाल से कहती है, यह सब अपने है तो आपने हम से यह बात क्यों छिपाई ? यह आपने अच्छा नहीं किया डैड। मि. लाल के मानस पर भले ही पूर्ववर्ती जीवन, विशिष्ट दृष्टिकोण और उनपर किए गए अहसानों के अवशेष दस्तक दे रहे हो, उनकी पुरानी दुनिया से पिंकी का संपूर्ण अपरिचय उसकी अपनी मन:स्थिति में आए इस बदलाव से जुड़ नहीं पाता । अपनी जाति छिपाकर जीने के बाप के व्यवहार के प्रति छोटी-सी पिंकी के शब्द गहरा प्रभाव डालते हैं। मि. लाल की बेचैनी छोटी पिंकी की बातों के कारण बढ़ती है। अपनों के प्रति अपनेपन की सीख देनेवाली पिंकी के शब्द मि. लाल को पश्चाताप में डुबा देते हैं। झूठे मान-सम्मान के लिए जाति को छिपाके जीने की मानसिकता को लेखक ने यहाँ स्पष्ट किया है। जाति के भय से

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('अंधड़' कहानी से) पृष्ठ 86

2 वही, पृष्ठ 91

व्यर्थ भागनेवाले मि. लाल के माध्यम से दलितों की दयनीय दशा को ओमप्रकाश वाल्मीकि ने यहाँ प्रस्तुत किया है।

2.5.2 **'भय'** कहानी में इस बात पर प्रकाश डाला है कि जाति-भय और जाति-हीनता कभी-कभी आदमी को पागल बना देती है और कभी-कभी ऐसे मोड़ पर ला खड़ा कर देती है, जहाँ सवर्ण समाज की सोच कमजोर पड़े । जाति-भय उत्पन्न करने वाली यह कहानी दलित-दलन को किस तरह उकरती है यही ओमप्रकाश जी ने इस कहानी में दिखाया है। यहाँ संजिव जी का कथन दृष्टव्य है - ''वर्गांतरीत दलित का भय रेंगता है, जड़े जिसे छोड़ती नहीं और खुद को ऊपरी वर्ग में समोने की हर कोशिश जहाँ बेमानी हो उठती है।''[1] ऐसी भयात्मक परिस्थिति ही इस कहानी में दृष्टिगोचर होती हैं।

इस कहानी का नायक दिनेश जो अपनी घर की देवि को बलि चढ़ाने के लिए सुअर का बच्चा लाने के लिए किशोर के साथ जाता है । बलि-प्रथा को दिनेश का विरोध है। लेकिन माँ की जिद्द के लिए इसपर छोटे से सुअर को बलि चढ़ाने की नौबत आती है - ''आँखें बंद करके पूरी ताकत से छुरी बच्चे के सीने में भोंक दी । उस समय दिनेश के चेहरे और आँखो में वहशीयत उतर आयी थी। आँखों का रंग सुर्ख हो गया था। छुरी लगते ही बच्चे की चीख से घर-आँगन दहल गया था।''[2] बच्चे की चींची से मादा सुअर भी आगबबुला हो गया था, जिसका चेहरा दिनेश के सामने सदा रेंगने लगा था। ऐसे में वह जिस मुहल्ले में रहता था वहाँ किसी को भी मालूम नही था कि वह छोटी या निम्न जाति से है। सब कुछ बिना किसी को समझे करना था। मांस की बोरी बांधकर वे दोनों घर में आते हैं। पूजा की तैयारी हो गई थी। दिनेश का भय और भी बढ़ने लगा था। क्योंकि रामप्रसाद तिवारी अकसर इनके घर आता था, अगर उसे पता चला तो ? रामप्रसाद तिवारी को मालूम न था कि दिनेश एस.सी. हैं । वह आरक्षण विरोध में गाली-गलौज भी देता था। ऐसे क्षणों में दिनेश चुप बैठता था - ''इन सब के बावजूद दोनों में गहरी आत्मीयता थी।

---

1 सहा. सम्पा. अशोककुमार, संजीव-'इंडिया टुडे', 13 जून 2001, पृष्ठ 60

2 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('भय' कहानी से), पृष्ठ 44

14377 A

दिनेश यह भी जानता था, जिस दिन दोनों के बीच 'जाति' आ जाएगी, यह आत्मीयता पानी का बुलबुला साबित होगी।"[1] दिनेश का भय सोच में परिवर्तित हो रहा था। अचानक उसके घर में रामप्रसाद तिवारी आ ही जाता है, माँ उसे किसी तरह निकाल देती है। लेकिन जाते वक्त वह कह देता है कि दिनेश को उसने मलिन बस्ती में देखा था। दिनेश घबरा जाता है। एक तरफ तिवारी का चेहरा और दूसरी तरफ मादा सुअर। दोनों के बीच फँसे दिनेश की दयनीय स्थिति हो जाती है। वह चिल्लाता है और घर से तेज गति से सड़क पर दौड़ने लगता है। दिनेश से मादा सुअर की घर्र-घर्र आवाज और तिवारी का क्रूर चेहरा सहा नहीं जाता और वह पागलों की तरह रात के अंधेरे में दौड़ने लगता है।

इस कहानी में ओमप्रकाश जी ने दिनेश की भय की दोहरी अवस्था को उजागर किया है। उसका एक आयाम रामप्रसाद के जरिए उसकी असलियत उजागर हो जाने की आशंका से जुड़ा है - जाति की सच्चाई प्रकट हो जाने के भय से उपजा है यह भय। किंतु दूसरे आयाम पर यह भय अनचाहे अपने द्वारा की गई हिंसा से उपजा भय है। यह हिंसा उसने माँ के दबाव से की थी। उसका मन उस बच्चे की चींख को भूल नहीं पाता। जाति के छिपाने पर उपजे हीन भाव के प्रति लेखक के कटाक्ष तथा अनपेक्षित हिंसा के प्रति उसकी मानवीय संवदेना, दोनों को एक साथ चित्रात्मक अभिव्यक्ति देने की उसकी रचनात्मक क्षमता निश्चय ही उच्च श्रेणी की है। सारांशत: हम यह कह सकते हैं कि अंधड़ और भय ये कथाएँ जाति भय उत्पन्न करने को लेकर सशक्त बन गई हैं। दलित जीवन की दयनीय दशा में उनकी मनोदशा को अत्यंत सहज रूप में व्याख्यायित करनेवाले ओमप्रकाश वाल्मीकि की ये कहानियाँ श्रेष्ठ अभिव्यक्ति के उत्कृष्ट प्रमाण हैं।

2.6 दलितों का इस्तेमाल करनेवाली कथाएँ -

ओमप्रकाश वाल्मीकि के कथा-साहित्य का निर्माण जनरूचि नहीं बल्कि सहजता से यथार्थता की ओर ले जानेवाली कथा-यात्रा की अद्भुत उपलब्धि है। उन्होंने

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('भय' कहानी से) पृष्ठ 45

समाज की जटिलता के साथ मानव-मन की जटिलता को भी अपने कथा साहित्य में स्थान दिया है। उन्होंने स्वयं जिस समाज रूप को देखा है उसके कई रूपों को बेबाकी से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जहाँ सिर्फ दलितों का अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल किया हुआ अंकित है।

2.6.1 **'बैल की खाल'** कहानी उन दलितों की है जो गाँव में मरे प्राणियों को उठाकर बाहर ले जाते है और उसकी खाल बेचकर अपनी जीविका चलाते हैं। इस काम से उन्हें जितनी आय मिलती उससे कई ज्यादा कष्ट उठाना पड़ता था। यह कहानी दलितों के चरम अभाव और अपमान ग्रस्त जीवन के बीच सुरक्षित उनकी मनुष्यता और पर दु:ख कातरता को रेखांकित कराती है। उक्त कहानी काले और भूरे के चरित्र के जरिए दलितों में स्थित मानवीय पहलू को उजागर करती है, जो सवर्ण समाज के शिखंजे में फँसे हैं। इन दोनों का सिर्फ एक ही काम था कि गाँव में मरे मवेशियों को बाहर ले जाना और उसकी खाल से अपना चरितार्थ चलाना । काम के बदले इन्हें कोई खास रकम नहीं मिलती, या कोई अनाज नहीं देता । उनका कसुर सिर्फ इतना था कि वे दोनों दलित हैं और उन्हें अपने पुरखों की परंपरा के अनुसार ऐसे काम करने है। इसलिए गाली-गलौज और अपमान सहते हुए भी उन्हे ऐसे काम करने पड़ते थे। इसके मूल में उनकी जाति ही अपनी विशेष भूमिका निभा रही है। इस संदर्भ में डॉ. शंकर दयाल शर्मा कहते हैं - "जाति प्रथा व्यक्तियों के लिए कार्य का निर्धारण उनकी मौलिक समता के आधार पर नहीं बल्कि जन्म तथा माता-पिता के सामाजिक स्थितियों के आधार पर करती है। इसके कारण मौलिक प्रतिभा कुंठित हो जाती है तथा सामाजिक विकास रूकता है।"[1] यह कहानी जाति के नाम पर उन पर थोपे गए गुलामी का उदाहरण है।

पंडित बिरिज मोहन का बैल बीच रास्ते में मर गया था। बहुत देर तक काले और भूरे का कहीं अता-पता नहीं था। धूप जैसे-जैसे बढ़ने लगी बैल गांधियाने लगा

---

1 डॉ. शंकर दयाल शर्मा - हमारे पथ प्रदर्शक, पृष्ठ 68

था। हर कोई काले और भूरे को कोस रहा था। बैल के मरने से दोनों गाँव के लिए अचानक महत्त्वपूर्ण हो गए थे। उनके अभाव में यह काम कोई नहीं करता था।

काले और भूरे थोड़ी देर में आ जाने के बाद पंडित बिरिज मोहन उनपर बिफर पड़ता है 'कहाँ मर गए थे भोसडी के और अब आ रहे हो महाराजा की तरियों । इस बैल को कौन उठावेगा ..... तुम्हारा बाप । इनको काम तो करना पड़ता ही ऊपर से गालियाँ भी सहनी पड़ती । क्या करते बेचारे, जाति जो उनके पीछे थी। इस संदर्भ में डॉ. अजमेर सिंह काजल का कथन दृष्टव्य है - "जाति जन्म के साथ पैदा होती है और आजीवन पीछा करती है। यह एक संस्कार बन चुकी है। व्यक्ति इससे मुक्ति पाने के लिए चाहे कितने भी प्रयास करे यह अलग नहीं हो सकती ।"[1] काले और भूरे ने चुपचाप बैल को उठाया और चले गये। इस काम के लिए गाँव की तरफ से या जिसका जानवर मरा है उनसे भी इन्हें कुछ नहीं मिलता । इस काम के लिए उन दोनों को बदले में गालियाँ मिलती हैं।

इस कहानी में काले और भूरे का उच्च वर्ग द्वारा सिर्फ इस्तेमाल हुआ है। इस कहानी में दलितों के प्रति अभिजात वर्ग के अमानवीय व्यवहार और उनकी यातनापूर्ण जिंदगी की बिड़म्बनाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई है।

2.6.2 **'बिरम की बहू'** कहानी में भी उच्च वर्ण के लोगों द्वारा एक दलित का इस्तेमाल ही हुआ है। 'बिरम की बहू' कहानी 'ग्रहण' कहानी का आगला हिस्सा है। दोनों कहानियाँ आपस में जुड़ी हुई हैं। दलित रमेसर का फायदा लेकर बिरम की बहू बांझपन के दाग से मुक्ति पाती है मगर उस दलित की ओर बाद में ताकती तक नहीं । सिर्फ उसका अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल कर अपना स्वार्थी स्वभाव दिखाया है। ग्रहण के वक्त बहू और रमेसर के मीलन के बाद बहू के पाँव भारी हो जाते हैं। चौधरी के घर में आनंद भरा वातावरण निर्माण हो जाता है। जब रमेसर को "यह मालूम हुआ कि बिरम की बहू के पाँव भारी हैं तो वह उछल पड़ा था जैसे दुनिया की सबसे बड़ी नियामत उसे मिल गई हो ।"[2]

---

1 कुसुम चतुर्वेदी- डॉ. अजेमर सिंह काजल, 'नया मानदंड' अप्रैल-जून 2003, पृष्ठ 63
2 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम ('बिरम की बहू' कहानी से) पृष्ठ 72

वह बहू को देखने के लिए तड़फ उठता है। रमेसर बहू की आँखो में कुछ पढ़ना चाहता था। बहू अपने अंतर्मन में रमेसर के प्रति कृतज्ञ थी। क्योंकि रमेसर ने उसे बाँझपन से मुक्ति दिलाई थी। लेकिन वह अब कभी दुबारा उससे मिलना नहीं चाहती तथा उसे देखना भी नहीं चाहती । क्योंकि उसे मालूम था दोनों का रहस्य खोलना खतरों से खाली नहीं था। पूजा के वक्त औरतों के झुंड़ में घिरी मंदिर जाती बहू को देखने के लिए वह खड़ा रहता है। परंतु बहू सिर झुकाएँ आगे बढ़ जाती है। ''आँखों से ओझल होती बहू जी की पीठ पर उसकी आँखे टिकी थीं। उसे अभी भी लग रहा था, जैसे बहू जी मुड़कर एक बार जरूर देखेंगी।''[1] लेकिन बहू उसके लिए एक सपना बन जाती है। ग्रहण के सारे क्षण उसे याद आते हैं। लेकिन बहू के इस व्यवहार से वह ठगा-सा रह जाता है। शिवकुमार मिश्र जी कहते है - ''कहानी को रमेसर की मनोव्यथा से जोड़ते हुए बिना किसी बड़बोलेपन के एक निहायत शांत लय में विराय दिया गया हैं।''[2]

कहानी का सार हमें यह बताता है कि बाँझपन से मुक्ति पाने के स्वार्थ में सवर्ण स्त्री द्वारा एक दलित का इस्तेमाल करके उसे फेंक दिया है। कहानी दलित संदर्भ से जुड़े या न जुड़े हमारे समाज की एक ऐसी विसंगती से हमें जरूर रू-ब-रू करती है, जिसका तब तक कोई अंत नहीं जब तक उससे जुड़ी सोच निर्मूल नहीं होती ।

सारांशत: 'बैल की खाल', 'ग्रहण' और 'बिरम की बहू' जैसी कहानियों में सवर्ण समाज द्वारा दलितों का सिर्फ इस्तेमाल किया हुआ परिलक्षित होता है।

2.7 शोषण करनेवाली कथाएँ -

दलित समाज की यातनाओं एवं पीड़ाओं की अभिव्यक्ति के साथ-साथ जिन्होंने उन्हें अमानवीय व्यवहार का शिकार बनाया उस वर्ण व्यवस्था के नकाब को उतारने की कोशिश ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कहानियों में की है। ये कहानियाँ दलित

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - सलाम (' बिरम की बहू' कहानी से), पृष्ठ 77
2 संपा. आग्नेय - 'साक्षात्कार', नवंम्बर 2001, पृष्ठ 103

की आँख से सामाजिक इतिहास का घटनात्मक वृत्तांत हैं जिसमें शोषण करनेवाली कथाएँ भी हैं।

2.7.1 **'रिहाई'** नामक कहानी में अमीर द्वारा गरीब पति-पत्नी का सिर्फ शोषण हुआ है। उनकी बीमारी का खयाल भी उन्हें नहीं आता । अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए इसमें दलितों का शोषण, कहानी में चित्रित है।

मिट्ठन को तेज बुखार है। वह अपनी पत्नी और बच्चे के साथ गोदाम की रखवाली का काम करता है। ऐसी हालत में मिटठ्न का उठना मुनासिब नहीं था । तेज बुखार में वह तड़प रहा था। अचानक रात के वक्त लालाजी के ट्रक गोदाम में माल खाली करने को आते है। मिट्ठन की हालत समझे बगैर लाला उसे कामचोर समझकर बिफर पड़ता है "क्यों बे ! मैंने मुझे यहाँ मुफ्तखोरी के लिए रखा है क्या ..... तीन-तीन जनों का पेट पल रहा है इस गोदाम से । फिर भी बहानेबाजी किए बीना तू मानता ही नहीं ..... क्या इरादे हैं तेरे ..... चूतड़ों पे चर्बी चढ़ गई है ।"[1] लाला मिट्ठन के शरीर और बुखार को नहीं देखता और उसे बहानेबाज समझकर गालियाँ देता है।

सुगनी और मि्ठन बहुत ही दयनीय स्थिति में रह रहे थे। उन्हें गोदाम से बाहर जाने की इजाजत नहीं थी। कितने वर्षों से वे दोनों इस गोदाम में बंद थे। बाहर से लाला ताला लगाकर जाता था जो उसके आने पर ही खुलता । सुगनी गोदाम में मजदूरों के साथ काम कर रही थी । अचानक मिट्ठन के सिर पर बोरा गिर जाने से वह मुँह के बल पर गिर पड़ता है। पहले से कमजोर और ऊपर से यह हादसा । वह दर्द से तड़फ रहा था। सुगनी दहाड़े मार-मारकर रो रही थी। उस वक्त उसे अस्पताल ले जाने की अवश्यकता थी । मिट्ठन की बुरी स्थिति देखकर लाला को बाकी के लोग भी समझा रहे थे कि उसे अस्पताल ले लाने की जरूरत है। लेकिन लाला का रवैया देखकर सब चुप हो गए । लाला मिट्ठन को ही दोष देकर गोदाम को बाहर से ताला लगाकर चला जाता है।

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये ('रिहाई' कहानी से) पृष्ठ 75

मिठ्ठन की तबीयत काफी बिगड़ जाती है -" उसकी साँसें रूक-रूककर चल रही थीं। आँखें बंद थीं। चेतना पर बेहोशी छाई हुई थी, एक-एक पल भारी लग रहा था। सुगनी को लगने लगा था मिट्ठन अब नही बचेगा ।"[1] सुगनी लोहे के दरवाजे पर मार रहीं थी लेकिन दरवाजा नहीं टूट रहा था। वह सिना तान के ही खड़ा था। सुगनी थककर निढ़ाल होकर गिर जाती है। मिट्ठन की देह में भी कोई हलचल नहीं होती थी। अमीरी ने गरीबों का खून किया था। गोदाम में अब किसी की हरकत नहीं हो रहीं थी। उस गोदाम में सिर्फ उनके बेटे की चीख थी। बापू-बापू उठो ..... माँ को कुछ हो गया है। लेकिन वह छोटा-सा मासूम बच्चा क्या करता शोषितों के जनसागर में वे भी विलिन हो गए थे। इस कहानी में लाला द्वारा गरीब पति-पत्नी का शोषण हुआ है जो पूर्णतः अमानवीय है।

2.7.2 **'घुसपैठिये'** कहानी भी जीवंत यथार्थ को प्रस्तुत करती है। इसमें सवर्णों के शोषण और अत्याचार से एक दलित युवक को अपने प्राण त्यागने के लिए मजबूर कर दिया गया, जो संपूर्ण मानव जाति के लिए शर्मनाक है। यह कहानी उस कथा को प्रस्तुत करती है जहाँ ज्ञान के पवित्र मंदिर भी जाति से मुक्त नहीं हैं।

इस कहानी की घटना एक मेडिकल कॉलेज की है, जहाँ दलित विद्यार्थीयों का प्रवेश सवर्णों द्वारा घुसपैठ मानी जाती है। मेडिकल कॉलेज में दलित छात्रों पर ब्राहमण छात्र अत्याचार करते हैं। वे मेडिकल कॉलेज में दलित छात्रों को प्रवेश देने के विरूद्ध हैं। दलित छात्र सुभाष सोनकर पर यह कहानी केंद्रित है। दलित छात्रों को होस्टल में बंद करके पीटा जाता है। बस में आते-जाते सिनिअर विद्यार्थी चिल्लाकर कहते हैं 'इस बस में जो भी चमार स्टुड़ंट है - वह खड़ा हो जाए .... फिर उसे लात घुसों से पिछली सीट पर ले जाकर जी भर मारते । कॉलेज का प्रशासन भी इसमें ज्यादा ध्यान नहीं देता। क्योंकि उन्हें भी लगता है कि दलितों का मेंडिकल में आना एक प्रकार का अतिक्रमण है। प्रणव मिश्रा ने सुषाष सोनकर पर जो अत्याचार किया था उसके खिलाफ वह पुलिस में रिपोर्ट दर्जे करता है। अंजाम यह होता है कि उसे पहली ही परीक्षा में फेल किया जाता है। अधिकारी वर्ग भी

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये ('रिहाई' कहानी से) पृष्ठ 78

दलित छात्रों के प्रति भेदभाव पूर्ण रवैया अपनाता है। कॉलेज के मॅनेजमेंट को यह समस्या गंभीर नही लगती । जब सुभाष सोनकर अपनी फरियाद सुनाने डीन के पास गया था तब उसे सुनना पड़ा था कि, आरक्षण से आये हो थोड़ा बहुत सहना होगा । ऐसे उत्तर से भी दलितों का मन चकनाचूर हो जाता था। निष्कर्षत: स्पष्ट है कि प्रस्तुत कहानी दलितों के अन्याय के प्रति आवाज उठाने की कोशिश करती है। सवर्ण की ज्यादतियों से दलित छात्र सामना कर रहे थे। उनकी बातें सुननेवाला कोई भी न था। इस कहानी में - ''राकेश और रमेश चौधरी भी दलितों पर होते अत्याचारों के विरूद्ध आवाज उठाते हैं। पर इन सब की गुहार बेकार साबित होती है।''[1] सुभाष सोनकर अपने अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाता है। सोनकर ने जो हिमाकत की इस के लिए उसे अपनी जान की कीमत चुकानी पड़ी । सोलजी के थॉमस कहते हैं - ''उसकी हत्या कर दी गई। जिसे आत्माहत्या कहकर प्रचारित किया गया था।''[2] इस कहानी में दलित छात्रों की ज्वलंत समस्याओं को प्रस्तुत किया है। सवर्णों के अत्याचार और शोषण से दलित विद्यार्थी सोनकर को अपनी जान गँवानी पड़ी । वर्ण विभाजित समाज में अभिजात वर्ण निम्न वर्ण के लोगों के साथ बुरी तरह ही पेश आए हैं। अर्थात् यह कहानी दलितों के शोषण को ईमानदारी और वास्तविकता से रेखांकित करनेवाली अत्यंत सशक्त कहानी होगी ।

2.7.3 **'प्रमोशन'** कहानी एक दलित मजदूर की है, जिसकी तरक्की स्वीपर से अकुशल कामगार पद पर हो जाती है। पदोन्नति पाकर उसके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। सुरेश आनंदित होकर घर जाकर अपनी पत्नी का मुँह मिठा करता है। पहले काम करने के उत्साह से कई गुना ज्यादा उत्साह सुरेश के मन में इस प्रमोशन ने पैदा किया था। अब वह स्वीपर से मजदूर बन गया था। उसने मजदूर-मजदूर भाई-भाई की रैली देखी थी। उसमें सम्मिलित होने का हक अब उसे भी मिल गया था। मजदूर युनियन का लाल झण्डा उठाकर

---

1 सम्पा. विभुतिनारायण राय, सोलजी के थॉमस 'वर्तमान साहित्य', जुलाई-अगस्त-सितंबर 2003, त्रैमासिक, पृष्ठ 35

2 वही, पृष्ठ 35

रैली में जाकर इन्कलाब जिंदाबाद के सपने देख रहा था। पांडे ने सुरेश की पदोन्नति कर एक हर्षभरा माहौल उसके जीवन में प्रदान किया था।

दूध लाने की डयूटी हर रोज किसी न किसी वर्कर की होती थी। दूध लाना और सबको बाँटने की डयूटी एक दिन सुरेश पर आ गई। दूध लाकर उसने अपने सब मजदूर भाइयों को आवाज दी । लेकिन "और दिनों की तरह कोई दूध लेने की बेताबी नहीं दिखा रहा था। सभी अपने-अपने काम में लगे होने का दिखावा कर रहे थे।"[1] एक घंटे भर तक कोई नहीं आया तब उसकी परेशानी बढ़ गई। क्या करें उसकी समझ में नहीं आ रहा था। उसने सुपरवाइज़र से शिकायत की किंतु उनकी भी समझ में नहीं आ रहा था। रोज दूध की छीना-छपटी को देखकर वह तंग आ गए थे। लेकिन अचनाक आज ? उन्होंने मौजूदा हालात संबंधी कुछ मजदूरों की पूछताछ की । लेकिन मजदूरों में भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल रहे थे। एक मजदूर ने हिचकिचाते हुए रहस्य खोल दिया कि 'साहब सुरेश स्वीपर है ..... उसके हाथ की चीज कोई कैसे खा-पी सकता है ।' सुपरवायझर गौत्तम को भी गुस्सा आता है और वह भी जोर से चिल्लाते है 'जाओ उस पांडे को बुलाकर ले आओ ।' ओमप्रकाश जी ने इस कहानी का अंत प्रश्नात्मक ही रखा है लेकिन दलित के हाथों से दूध न पीना उसकी मानसिकता का शोषण ही है जिसे ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने बेहिचक प्रस्तुत किया है।

उक्त कहानी को पढ़ने के उपरांत मन-मस्तिष्क में अनेक प्रश्न खड़े होते हैं कि आखिर दलितों के प्रति दुर्भावनापूर्ण व्यवहार समाज कब तक अपनाएगा ? दलित जीवन की दुर्दशा और उनके प्रति समाज के व्यवहार के जिस सत्य को ओमप्रकाश वाल्मीकि ने उद्घाटित किया है, क्या समाज उससे अनभिज्ञ है ? समाज के जिस विद्रुप, बीभत्स, क्रूर और अमानवीय चेहरे पर गैर दलित समाज परदा डालता आया है वह न जाने सच से साक्षातकार क्यों नहीं करना चाहता ? ऐसे एक नहीं अनेक प्रश्नों को ओमप्रकाश वाल्मीकि ने उठाया है।

---

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि - घुसपैठिये ('प्रमोशन' कहानी से) पृष्ठ 49

उपर्युक्त 'रिहाई', 'घुसपैठिये' और 'प्रमोशन' कहानियों में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने शोषण की समस्या का सार्थक चित्रण किया है। हालात के साथ खिलवाड़ कर उनकी दयनीय परिस्थिति का शोषण रिहाई कहानी द्‌वारा व्यक्त हुआ है। ज्ञान के मंदिर में भी अध्यापकों द्‌वारा आज भी दलितों के प्रति द्रोणाचार्य की भूमिका निभायी जा रही है इसका चित्रण कहानी में है, और 'प्रमोशन' में प्रामाणिक मजदूर सुरेश की मानसिक स्थिति का शोषण दृष्टिगोचर हुआ है। निष्कर्ष यह कि उपर्युक्त कहानियों में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने शोषण की यथार्थ स्थिति प्रस्तुत की है।

निष्कर्ष -

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ ऐसे यथार्थ को हमारे सामने लाती हैं, जो हमें सोचने के लिए विवश करता हैं कि हम अपनी सामाजिकता में वर्णव्यवस्था के नासूर को क्यों नहीं देख पा रहे हैं ? उनकी प्राय: सभी कहानियाँ दलित जीवन की पीड़ा और पहचान को अपने में संजोये हुए हैं। हम उनकी सर्जता में आज की कहानी के एक ऐसे सर्जक का साक्षात्कार करते हैं जिसमें रचनात्मक विवेक के साथ यथार्थ के प्रति एक संजीदा रूख है, और जो इन्सानियत के वड़े आशयों से जुड़ा रचनाकार है। उनकी कहानियों के स्वरूप विवेचन से जो निष्कर्ष सामने आता है वह यह कि उनकी भावप्रवण कथाओं में भावनाओं की उच्च कोटि की परिसिमा और भावनिक समस्या को पेश किया है। संघर्षयुक्त कथाओं में घटना के अनुसार परिस्थिति से संघर्ष करनेवाली उनकी कहानियाँ निहित हैं। 'सलाम' कहानी द्‌वारा रूढ़ियों के विरोध का संघर्ष प्रस्तुत हुआ है तो 'सपना' कहानी द्‌वारा जातीय संघर्ष निर्माण हुआ है। दमन करनेवाली कहानियों के अंतर्गत उच्चवर्ग द्‌वारा गरीबों की मजबूरियों का फायदा उठाकर उनका दमन करनेवाली कथाओं को स्थान मिला है। यौन सबंध में जाति न माननेवाली कथा में उच्च-वर्ग की स्त्री दलित रमेसर का फायदा उठाती है, बांझपन से मुक्ति पाने के लिए और बाद में उसे ताकती तक नहीं। यहाँ सवर्ण समाज की स्त्री ने सिर्फ संतान प्राप्ति हेतु दलित युवक से यौन संबंध रखकर उसका फायदा उठाया है।

जातिभय उत्पन्न करनेवाली कहानियों के अंतर्गत आदमी जातिभय के कारण कुछ गलत कदम उठाता है, और अंतत: उसे पश्चाताप होता है यही बात 'अंधड़' और 'भय' कहानियों द्वारा प्रस्तुत की है। दलितों का इस्तेमाल करनेवाली कहानियों में सवर्ण समाज द्वारा स्वार्थी वृत्ति से दलितों का सिर्फ इस्तेमाल किया गया है। इसे 'बैल की खाल' और 'बिरम की बहू' कहानियों में प्रस्तुत किया है। कुछ कहानियों में वाल्मीकि जी ने सवर्ण समाज द्वारा शोषित दलितों का चित्रण किया है जो 'रिहाई', 'घुसपैठिये' और 'प्रमोशन' में देखने को मिलता है।

उपर्युक्त विवेचन से यही निष्कर्ष निकलता है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि हमें यह दर्शाते है कि यथार्थ और क्रूर सत्य ही इन प्रतिकों की उत्कृष्टता और पवित्रता को तोड़ेंगे और खण्डित होंगी वे सारी प्रतिमाएँ जिसे अपने को श्रेष्ठ समझनेवाला समाज सदियों से बचाकर रखता आया है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की यह कहानियाँ संघर्षमय है। यह संघर्ष गरीब दलितों का रोटी के साथ-साथ आत्मसम्मान और सामाजिक सम्मान का संघर्ष है। इस तथाकथित समाज की श्रेष्ठता में अनेक विड़ंबनाएँ और विसंगतियाँ हैं तथा आर्थिक रूप से कमजोर भारतीय दलित समाज की विभिन्न समस्याएँ ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की कहानियों में पूरी ईमानदारी और यथार्थता से अभिव्यक्त हुई हैं।